इकाई 2 अमूर्तकाल

इकाई की रूपरेखा

2.0 उद्देश्य

2.1 प्रस्तावना

2.2 अमूर्त्त काल की अवधारणा

2.3 अमूर्त्त काल का ऐतिहासिक स्वरूप

2.4 प्राचीन एवं अर्वाचीन सूक्ष्मकाल परिमापक इकाईयों का परस्पर समन्वय

2.5 सारांश

2.6 पारिभाषिक शब्दावली

2.7 बोध प्रश्न

2.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

2.0 उद्देश्य

वेदांग ज्योतिष जो कि ज्योतिषशास्त्र के प्रथम पुरुष महात्मा लगध मुनि द्वारा रचित है तथा ज्योतिष का आद्य स्वतंत्र ग्रन्थ भी है। इस क्रम में लगध मुनि से प्रारम्भ करके म. म. पंडित सुधाकर द्विवेदी और म.म. बापूदेव शास्त्री तक की सिद्धांत ज्योतिष की सनातन धारा में अनेक ग्रन्थ रचे गये हैं तथा उनमें अनेक नूतन विषयों का चिन्तन भी हुआ है यह चिन्तन विशेष इसलिए भी था क्यों की इसके द्वारा ग्रहगणित के नये नये सिद्धांत विकसित हुए जिसके अन्तर्गत काल गणना के लिए काल की सूक्ष्म इकाइयों की आवश्यकता अनुभूत हुई और सहायक रूप में प्रत्येक सिद्धांत ज्योतिष के ग्रन्थों में काल की इन सूक्ष्म इकाइयों का प्रतिपादन आचार्यों के द्वारा विस्तारपूर्वक किया गया। इन सूक्ष्म और स्थूल इकाईयों से ही काल विषय की समग्रता अथवा सम्पूर्णता का भास होता है अर्थात् सूक्ष्म और स्थूल इकाइयों से ही विषय की सम्पूर्णता परिलक्षित होती है। इस इकाई के अध्ययन से आप ज्योतिषशास्त्र के ज्ञान विषयक निम्नलिखित उद्देश्यों की पूर्ति कर सकेंगे–

1. इस इकाई के अध्ययन से काल स्वरूप का ज्ञान होगा।
2. आप इसके अध्ययन से अमूर्त्त काल के पूर्ण स्वरूप से परिचित होंगे।
3. काल के सूक्ष्मातिसूक्ष्म अवयवों को समझ सकेंगे।
4. काल के प्रभाव एवं प्रवाह से परिचित हो सकेंगे।
5. ऋषियों के चिन्तन और उनकी मनीषा का परिचय प्राप्त करने या उनको जानने के उद्देश्य से भी भारतीय काल गणना की अमूर्त्त इकाईयों का अध्ययन आवश्यक है।

2.1 प्रस्तावना

वेदों का महत्व न केवल उनकी प्राचीनता तथा उनकी व्यापकता के कारण है अपितु उनमें निहित ज्ञान विज्ञान एवं शाश्वत सिद्धान्तों के कारण ही वेदों के अध्ययन ने नवीन शोध और सम्भावनाओं के मार्ग खोले हैं। इसीलिए पाश्चात्य जगत के कुछ विशिष्ट विद्वानों ने भी विगत कुछ शताब्दियों से वेदों के अध्ययन में अपना समग्र

जीवन ही समर्पित कर दिया है तथा उनमें से अनेक सिद्धान्तों को भी खोज निकाला है। यह भी निर्विवाद सत्य सिद्ध है कि वेद विश्व के प्राचीनतम ग्रन्थ हैं तथा इन वेदों में ज्ञान विज्ञान के अनेक गम्भीर विषय समाहित हैं जिनमें काल भी एक महत्वपूर्ण एवं व्यापक विषय है।

काल शब्द की निष्पत्ति 'कल्' संख्याने धातु से संख्या अर्थ मेंहुई है।

काल के स्वरूप का वर्णन करते हुए आचार्य श्री हारीत अपने ग्रन्थ 'हारीत संहिता' जो कि आयुर्वेद का प्रसिद्ध ग्रन्थ है में कहते हैं कि काल लोक की संख्या करता है काल जगत की संख्या करता है तथा काल विश्व की संख्या करता है जिससे यह काल के नाम से जाता है। सभी भूतों को कवलित करने के कारण भी इसे काल कहा जाता है। यह काल अनेक रूपों में प्रतिष्ठित है। जिनमें महाकाल सकल चराचर के विनाश का सूचक होता है तथा इस महाकाल में महः जनः तपःएवं सत्यं ये चार भुवन अवस्थित हैं तथा भूः, भुवः, स्वः लोकों में विद्यमान सृष्टि का विनाश हो जाता है। यथा–

तत्गतब्रह्मसृष्टेः स्याद्विलयस्तदिनान्तजः।
सर्वदैवमहाकाले महर्लोकादि खेऽस्ति हि।।

(सि.त.वि.,म,मा,श्लो.48)

यहाँ प्रमाण रूप में आचार्य कमलाकर भट्ट जी कह रहे हैं कि ब्रह्मा के दिनान्त अर्थात् कल्पान्त में उनके द्वारा की गयी भुर्भुवः स्वः गत सृष्टि का लय हो जाता है, परन्तु महः जनः तपः एवं सत्यं यें चारों लोक प्रलयरूपी महाकाल में भी अवस्थित होने के कारण प्रलयत्व को प्राप्त नहीं होते अर्थात् इनकी स्थिति बनी रहती है यहाँ आचार्य कमलाकर का मत स्पष्ट है कि भूः भुवः एवं स्वःनामक ये तीनों लोक प्रलयत्व को प्राप्त होते हैं।

सिद्धांतज्योतिष की ज्ञान परम्परा में पूर्ववर्त्ती आचार्यों का चिन्तन उत्तरोत्तर सूक्ष्मता को प्राप्त हुआ है तथा इन सूक्ष्मातिसूक्ष्म इकाइयों का अन्वेषण उनके अतुलनीय प्रतिभा का प्रमाण है। उन आचार्य मनीषियों की ज्ञान सम्पदा वर्त्तमान में हमारे पास उनके आशीर्वाद के रूप में उपलब्ध है तथा यह हमारे लिए अत्यन्त गौरव की बात है।

2.2 अमूर्त्तकाल की अवधारणा

भारतीय ज्योतिषशास्त्र के सिद्धान्त स्कन्ध के अन्तर्गत समय समय पर अनेक आचार्यों ने एक ही विषय का अलग अलग विधि से अथवा प्रकारान्तर से अपने ग्रंथों में प्रतिपादन किया है। प्रसंगवश काल का अमूर्तरूप प्रासंगिक होने से सिद्धांतज्योतिष के मूल विषयों में से एक है क्यों कि काल की स्थूल गणना के लिए सूक्ष्म गणना ही आधार रूप है। जिस प्रकार प्रतिविपल के बिना विपल नहीं हो सकता बिना विपल के पल नहीं हो सकता और पल के बिना घटी की परिकल्पना नहीं की जा सकती। उसी प्रकार अमूर्त्तकाल के बिना मूर्त्तकाल की परिकल्पना भी नहीं की जा सकती है। इसीलिए गणित ज्योतिष में यदि सूक्ष्म कालमान अथवा परिमाण यदि अभीष्ट है तो अमूर्त्त काल अति प्रासंगिक हो जाता है।

विषय की सूक्ष्म इकाइयों की प्रासंगिकता को निम्नलिखित कुछ उद्धरणों की सहायता से सरलतापूर्वक से समझा जा सकता है।

उदाहरण 1. किसी भी भौतिक वस्तु का निर्माण परमाणुओं के संयोग से ही हुआ है अतः जितनी सरलता से भौतिक वस्तु दृष्टिगोचर होती है उतनी सरलता से परमाणु दृष्टिगोचर नहीं होता, यद्यपि भौतिक वस्तु की सत्ता स्थूलात्मक है और परमाणु की सत्ता

सूक्ष्मातिसूक्ष्म है तथापि परमाणु की सत्ता की अवहेलना नहीं की जा सकती। अतः हम कह सकते हैं कि स्थूलात्मक सत्ता का आधार रूप सूक्ष्म सत्ता ही है स्थूल, अणु एवं परमाणु सत्ता निश्चित रूप से शोध एवं अध्ययन का विषय हमेशा से रहे हैं।

उदाहरण 2. किसी संक्रामक रोग का लक्षण जितनी सरलता से दृष्टिगोचर होता है उतनी सरलता से संक्रामक विषाणु दृष्टिगोचर नहीं होते इसलिए रोग के उपचार के लिए लक्षण का उपचार नहीं किया जाता अपितु संक्रामक विषाणु का उपचार किया जाता है। संक्रामक विषाणु सूक्ष्म होने से अध्ययन और शोध का भी विषय है। इसलिए सूक्ष्म विषाणु के अध्ययन के लिए गणितीय सूक्षम ईकाईयों की आवश्यकता अनुभूत होती है इसलिए सूक्ष्म सत्ता अवहेलना योग्य नहीं है। सूक्ष्मातिसूक्ष्म इकाई स्थूलात्मक इकाई की पूरक होती हैं अतः अध्ययन एवं शोध की दृष्टि से स्थूल और सूक्ष्म दोनों प्रकार की इकाईयां अनिवार्य होती हैं सूक्ष्म से ही स्थूल बनता है यह भौतिकी का सामान्य नियम है।गणित में भी अमूर्त्त इकाईयों की सूक्ष्मता और प्रासंगिकता को कुछ उदाहरणों से समझा जा सकता है।

उदाहरण 1. सूर्यसिद्धान्त के अनुसार परिधिव्यास सम्बन्ध (π) का मान $\sqrt{10}$ है, भास्कराचार्य के अनुसार स्थूलमान $22/7$ तथा सूक्ष्ममान $3927/1250$ है, आचार्य आर्यभट्ट के अनुसार π का मान $62832/20000$ होता है एसी स्थिति में सूक्ष्मता की दृष्टि से आचार्य आर्यभट्ट द्वारा प्रतिपादित तथा भास्कराचार्य द्वारा सूक्ष्मफलार्थ प्रतिपादित मान 3.1416′ तुल्य और समीचीन है तथा सूक्ष्म होने से सर्वग्राह्य और प्रासंगिक भी है।

उदाहरण 2. गणित में कुछ संख्याएं ऐसी होती हैं जिनका वर्गमूल और घनमूल एक पूर्णांक संख्या होती है जैसे–

$\sqrt{4} = 2$,

$\sqrt{9} = 3$,

$\sqrt{16} = 4$,

$\sqrt{25} = 5$

उपर्युक्त वर्ग संख्याएं तथा

$\sqrt[3]{8} = 2$,

$\sqrt[3]{27} = 3$,

$\sqrt[3]{64} = 4$,

$\sqrt[3]{125} = 5$ इत्यादिघन संख्याएं होती है

परन्तु इन वर्ग एवं घन संख्याओं के अतिरिक्त संख्यायें वर्ग या घन नहीं होती हैं तथा उनके वर्गमूल या घनमूल सरलतया पूर्णांक में नहीं निकलते। अतः इनके ज्ञान के लिए सूक्ष्म संख्याओं की आवश्यकता होती है।

$\sqrt{2} = 1.414213$,

$\sqrt{3} = 1.732050$

$\sqrt{5} = 2.236067$,

$\sqrt{6} = 2.449489$

इत्यादि वर्ग संख्याएं नही हैं परन्तु इनका मूल निकालना आवश्यक है तों सूक्ष्म अंकों में इनका कार्य हो जाएगा और पूर्णांक संख्याओं से अतिरिक्त जो संख्याएं हैं जिनके घनमूल जैसे–

$\sqrt[3]{2} = 1.\ 259921$,

$\sqrt[3]{3} = 1.442249$,

$\sqrt[3]{4} = 1.587401$,

$\sqrt[3]{5} = 1.709975$

इत्यादि संख्याएँ भी घन नहीं हैं अतः हम कह सकते हैं कि इन संख्याओं के प्रतिपादन में यदि अमूर्त्त इकाईयां न हों तो सूक्ष्म परिणाम नही मिल सकता इसलिए गणित के क्षेत्र में सूक्ष्म इकाईयां अत्यन्त प्रासंगिक होती हैं। गणित सिद्धांतज्योतिष का विषय होने से गणित के अनेक क्षेत्रों में सूक्ष्म और स्थूल इकाईयां होती है। रेखागणित में जैसे 'लम्बाई' आदि की सूक्ष्म और स्थूल इकाईयां प्रसिद्ध है। 'भार' आदि की भी सूक्ष्म और स्थूल इकाईयां भी प्रसिद्ध हैं ठीक उसी प्रकार काल की भी सूक्ष्म और स्थूल इकाइयां प्रसिद्ध हैं इसलिए गणित के प्रत्येक क्षेत्र में सूक्ष्म इकाईयों की प्रासंगिकता मुख्य रूप से होती है।

2.3 अमूर्त्त काल का ऐतिहासिक स्वरूप–

'वेदोऽखिलो धर्ममूलम्।'(मनु.स्म., अ. 2, श्लोक6)

मनु महाराज जी की इस उक्ति से यह स्पष्ट होता है कि सभी धर्मों का मूल वेदों में ही निहित है। अतः किसी भी विषय की प्रामाणिकता एवं वैज्ञानिकता वेद से सिद्ध होती है काल की अवधारणा के सम्बन्ध में भी अथर्ववेद काल का दार्शनिक स्वरूप प्रस्तुत कर यह प्रमाणित करता है कि काल की अवधारणा व काल का चिन्तन भारतीय ऋषियों मनीषियों के द्वारा वैदिक काल से ही होता रहा है, अथर्ववेद में कुल 20 काण्ड है और19वें काण्ड में कालसूक्त काल के लिए समर्पित है काल सूक्त में भृगु ऋषि ने काल की मूल अवधारणा का वर्णन वेद की शैली में किया है, महर्षि भृगु काल के दार्शनिक रूप को स्पष्ट करते हुए कह रहे हैं कि

कालो अश्वो वहति सप्तरश्मिःसहस्राक्षोअजरो भूरिरेताः।
तमा रोहन्ति कवयोः विपश्चितस्तस्य चक्राः भुवनानिविश्वा ।।

(अ.वे., का. 19, का.सू.1)

यहाँ मन्त्र में गतिशीलता अश्व का पर्याय समझना चाहिए यहाँ काल रूप जो अश्व है वह विश्व रुपी रथ का वाहक है अर्थात् काल ही विश्व का वहन करता है इसी के साथ–साथ यहां यह भी वर्णन प्राप्त होता है कि यह संपूर्ण विश्वरूपी ब्रह्मांड एक भरे हुए कुंभ के समान है तथा काल के ऊपर स्थित है अर्थात् संपूर्ण विश्व का आधार यह काल ही है। इस अविनाशी काल की प्रेरणा से ही भगवान सूर्य संसार को प्रकाशित करते हुए काल परिवर्तन पूर्वक भूत, वर्तमान एवं भविष्य का स्वरूप निर्माण करते हैं।

जो कुछ भी इस संसार में चक्षुओं से देखा जाता है या अदृश्य में विद्यमान है वह सब काल में ही समाहित होता है। सभी प्रकार के धर्म काल में ही घटित होतेहैं। इतना ही नहीं अपितु महर्षि भृगु के अनुसार स्थिरता और चंचलता आदि मन के सभी धर्म काल से प्रभावित होते हैं, सर्वदा एक रूप में विद्यमान यह अविनाशी काल प्रजा जन को

प्रभावित करता हुआ अनुकूलता एवं प्रतिकूलता पूर्वक सुख और दुःख का बोध कराता है।

महर्षि भृगु ने यह भी स्पष्ट कर दिया है कि यह समस्त विश्वकोश इस सर्वेश स्वरूपी काल से ही प्रेरित है इसके बिना ब्रह्मांड का अस्तित्व ही नहीं हो सकता, क्यों कि काल से उत्पन्न यह समस्त ब्रह्मांड काल में प्रवाहित होता हुआ काल में ही प्रतिष्ठित भी हो जाता है, यह अविनाशी काल ही अपनी ब्राह्मी चेतना विस्तृत करके परमेष्ठी प्रजापति को धारण करता हुआ स्वयं ब्रह्म स्वरूप में स्थापित होता है। इस अविनाशी काल का जो दार्शनिक स्वरूप अथर्ववेद के अनुसार महर्षि भृगु द्वारा अभिव्यक्त है इससे हम यह स्पष्टतया अनुमान लगा सकते हैं कि काल को जानने का उनका दृष्टिकोण कितना सूक्ष्म रहा होगा।

तैत्तिरीय आरण्यक के काल ज्ञान वर्णन प्रसंग में कहा गया है कि यज्ञ पुरुष से ही काल और उसकी समस्त इकाईयां (निमेष काष्ठा इत्यादि) प्रकट हुई हैं।

वस्तुतः काल के लौकिक एवं अलौकिक के भेद से दो रूप कहे गये हैं। जिनमें अलौकिक काल को ही अविनाशी काल कहा गया है। इसी में महः जनः तपः और सत्यं रूपी यह चार भुवन अवस्थित है और इसे ही महाकाल की संज्ञा भी दी गई है।

तत्गतब्रह्मसृष्टेः स्याद्विलयस्तद्दिनान्तजः।
सर्वदैव महाकाले महर्लोकादि खेऽस्थितः।

(सि.त.वि.,म,मा,श्लो. 48)

आचार्य कमलाकर भट्ट नें सिद्धान्ततत्त्वविवेक ग्रन्थ में काल स्वरूप को प्रतिपादित करते हुए कहा है कि ब्रह्मा द्वारा रचित सृष्टि का ब्रह्मा के दिनांत में अर्थात् कल्पांत में विलय हो जाता है परंतु महः जनः तपः सत्यं रूपी चार भुवन सदा ही महाकाल में अवस्थित रहते हैं अर्थात् इनकी प्रलय नहीं होता। महाकाल से प्रभावित होने के कारण ब्रह्मा की रात्रि में भी इनकी स्थिति बनी रहती है।इसके अतिरिक्त वेदांग ज्योतिष में भी लगध मुनि के द्वारा काल के विषय में सूक्ष्म परिचय दिया गया है।वेदांगज्योतिष के **'कालज्ञानं प्रवक्ष्यामि लगधस्य महात्मना'** इत्यादि वचनों से सिद्ध होता है कि कालका सूक्ष्म ज्ञान वैदिक काल से आरम्भ कर परवर्ती ऋषियों मनीषियों को पूर्ण रूप से ज्ञात रहा है। वैदिक काल और वेदांगज्योतिषकाल के बाद भारत में सिद्धांतज्योतिष के क्षेत्र में अभूतपूर्व परिवर्तन हुआ तथा सिद्धांत ज्योतिष अथवा गणित ज्योतिष के ग्रंथों की चिंतन धारा में अनेकों विषयों का समावेश हुआ उन्हीं विषयों में से एक विषय अमूर्त काल की चर्चा प्रायः सभी आचार्यों ने अपने अपने ग्रंथों के आरंभ में ही की है मयासुर और भगवान सूर्य का संवाद स्वरूप ग्रंथ जो सूर्यसिद्धांत है उसे सिद्धांतज्योतिष जगत में आद्य एवं आर्ष ग्रंथ की मान्यता प्राप्त है इसी सूर्यसिद्धांत में भगवान सूर्य मयासुर (जो रावण के श्वसुर भी हैं) को ज्ञान देते हुए काल भेद का निरूपण कर रहे हैं।

यथा

लोकानामन्तकृत्कालः कालोऽन्यः कलनात्मकः।
स द्विधा स्थूलसूक्ष्मत्वात्मूर्त्तश्चामूर्त्त उच्यते।।

(सू.सि., म.अ., श्लो.10)

भगवान सूर्य का उपदेश है कि जो काल भूत आदि प्राणियों का संहार करने वाला है वह कलनात्मक काल से भिन्न है अर्थात् लोक में गणना करने योग्य, व्यवहारिक काल कलनात्मक संज्ञा से व्यवहृत होता हुआ स्थूल और सूक्ष्म भेद से दो प्रकार का होता

है। यह जो सूक्ष्म काल है इसी की अमूर्त्त संज्ञा की गई है और जो स्थूल काल है उसकी मूर्त संज्ञा की गई है इसी अर्थ को प्रतिपादित करता हुआ एक श्लोक आचार्य कमलाकर भट्ट ने अपने सिद्धांततत्त्वविवेक के मध्यमाधिकार के मानाध्याय में कहा है। यहां आचार्य कमलाकर भट्ट सूर्यसिद्धांत का ही अनुसरण करते हुए आर्ष ग्रंथ की मर्यादा की अनुपालना ही कर रहे हैं।

आचार्य श्रीपति काल को **'स्थूलाणु रूप परिकल्पनया द्विधाऽसौ'** के अनुसार दो भागों में विभाजित कर उसका निरूपण करते हुए कह रहे हैं कि सृष्टि स्थिति और प्रलय के निमित्त भौतिक काल (जो भौतिक वस्तुओं को प्रभावित करता है) वह स्थूल और अणु भेद से दो प्रकार का है।

सूर्यसिद्धांत के सुप्रसिद्ध टीकाकार मैथिल पंडित आचार्य श्री कपिलेश्वर शास्त्री ने सूर्यसिद्धांत की टीका करते हुए मध्यमाधिकार में सूक्ष्मकाल की परिभाषा को लेकर नारदोक्त श्लोक उद्धृत किया है –

सूच्या भिन्ने पद्मपत्रे त्रुटिरित्यभिधीयते ।
तत्षष्ठ्या रेणुरित्युक्तो रेणुः षष्ठ्या लवः स्मृतः।।
तत्षष्ठ्या लीक्षकं प्रोक्तं तत्षष्ठ्या प्राण उच्यते।।

अर्थात् एक कमलपत्र का सूई द्वारा भेदनकाल त्रुटि नाम से जाना जाता है साठ त्रुटियों का एक रेणु तुल्य काल होता है साठ रेणु एक लव तुल्य काल होता है साठ लव एक लीक्षक तुल्य काल होता है और साठ लीक्षक एक प्राण तुल्य काल कहा गया है।

भास्कराचार्य ने इसी अमूर्त्त काल को अपने सिद्धांतशिरोमणि के कालमानाध्याय में ''योऽक्ष्णोर्निमेषस्य खरामभागाः स तत्परः'' के द्वारा चक्षु (पलक) झपकने में जितना समय लगता है वह काल एक निमेष तुल्य होता है ऐसा कहा है, यहाँ एक निमेष का 30 वां भाग एक तत्पर तुल्य होता है एक तत्पर के 100वें भाग को त्रुटि कहते हैं।18 निमेष एक काष्ठा तुल्य होते हैं और 30 कष्ठा एक कला तुल्य होती है।

आचार्य वटेश्वर के वर्णन अनुसार **'कमलदलनतुल्य काल उक्तस्त्रुटि'** से कहा है कि कमलदलन तुल्य काल त्रुटि तुल्य है, 100 त्रुटि तुल्य 1 लव होता है 100 लव एक निमेष तुल्य काल होता है 4½ निमेष 1 गुरु अक्षर तुल्य काल होता है 4 गुरु अक्षर एक काष्ठा तुल्य होते हैं और 2½ काष्ठा 1 असु तुल्य काल होता है।

मनुस्मृति में भी अमूर्त्त काल की अन्य इकाईयों की चर्चा करते हुए मनु महाराज कहते हैं कि 18 निमेष की 1 काष्ठा, 30 काष्ठा की 1 कला, 30 कला का 1 मुहूर्त्त, और 30 मुहूर्त्त एक अहोरात्र तुल्य काल होता है।

विष्णु महापुराण के प्रथम अंश के तृतीय अध्याय में भी अमूर्त्तकाल सम्बन्धी वर्णन आया है। पौराणिक मतानुसार 15 निमेष 1 काष्ठा तुल्य कहा गया है 30 काष्ठा 1 कला तुल्य काल कहा गया है और 30 कला को 1 मुहूर्त्त तुल्य काल कहा गया है।

श्री मद्भागवत पुराण में भी 'त्रसरेणुत्रिकं भूङ्क्ते यः कालः स त्रुटिः स्मृतः' के अनुसार अणु आदि से लेकर त्रुट्यादि सूक्ष्म इकाइयों का विस्तृत वर्णन आया है। श्रीमद्भागवतपुराण में मुनि मैत्रेय जी महात्मा विदुर जी से काल विभाग का वर्णन करते हुए कह रहे हैं कि 2 परमाणुओं के मिलने से 1 अणु बनता है दो अणुओं से द्वयणुक बनता है और 3 अणुमिल कर त्रसरेणु बनाते हैं झरोखे से आई हुई प्रकाश की किरण में वह त्रसरेणु देखा जा सकता है ऐसे 3 त्रसरेणुओं को पार करने में सूर्य की

किरण को जितना समय लगता है वह काल त्रुटि तुल्य कहा गया है इस त्रुटि का 100 गुणा काल वेध नाम से जाना जाता है और 3 वेध का 1 लव होता है और 3 लव 1 निमेष तुल्य काल कहा गया है और 3 निमेष को 1 क्षण कहते हैं। अमूर्त्त की इकाईयां अति सूक्ष्म होने के कारण सामान्य व्यवहार में प्रयुक्त नहीं होती है तथा पुराण एवं ग्रन्थ भेद से प्रमाणान्तर में भी वर्णित हैं।

अमूर्त्तकाल के विषय में प्रायः सभी आचार्य मनीषीगण 'त्रुटि' जो अमूर्त्तकाल की सूक्ष्म इकाई है की परिभाषा को लेकर संतुष्ट हैं अर्थात् पद्मपत्र को एक सुई से भेदने में जितना समय लगता है उसे'त्रुटि' तुल्य काल कहा जाता है। यह त्रुटि अमूर्त्तकाल की एक निश्चित इकाई है।'त्रुटि' से बड़ी इकाई 'रेणु' नाम से जानी जाती है 'रेणु' से बड़ी इकाई 'लव' कहलाती है 'लव' से बड़ी इकाई 'लीक्षक' कहलाती है और 'लीक्षक' से बड़ी इकाई प्राण कहलाती है त्रुटि से लेकर प्राण तक की गणना ही अमूर्त्त संज्ञक होती है। परन्तु शास्त्रानुशीलन से अमूर्त्त काल की इकाईयों के इन प्रमाण में अनेकशः भेद भी वर्णित है। तथापि अधिकाधिक ग्रन्थ उपर्युक्त मक काही निरूपण करते हैं।

2.4 प्राचीन एवं अर्वाचीन सूक्ष्मकाल परिमापक इकाईयों का परस्पर समन्वय

प्रस्तुत विषय को प्रायोगिक विधि से इसको समझने का प्रयास करते हैं। सिद्धांतज्योतिष की **"नाडीषष्ट्या तु नाक्षत्रमहोरात्रं प्रकीर्तितम्"**वचनानुसार से सिद्ध होता है कि एक नाक्षत्र अहोरात्र का मान 60 घटी तुल्य होता है जो आधुनिक समय की इकाई 24 घंटे के समान ही काल खण्ड है इसलिए कहा है –

60 मिनट = 1 घंटा

24 घंटे = 60 घटी

1 घंटा = 2½ घटी

60 मिनट = 2½घटी

24 मिनट = 1 घटी

1 मिनट = 2½ पल

60 सेकेण्ड = 2½ पल

24 सेकेण्ड = 1 पल

24 सेकेण्ड = 60 विपल

1 सेकेण्ड = 2½ विपल

4 सेकेण्ड = 10 विपल .....(1)

अब पुनः सूर्यसिद्धान्तानुसार **"षड्भिः प्राणैर्विनाडी स्यात् तत्षष्ट्या नाडिका स्मृता"** इस उक्ति से 6 प्राण तुल्य काल 1 विनाडी कहलाता हैअर्थात्

6 प्राण/असु = 1 पल (विनाडी) = 60 विपल

6 प्राण = 60 विपल

1 प्राण = 10 विपल ..... (2)

समीकरण (1) और समीकरण (2) परस्पर तुल्य होने से...

1 प्राण= 4 सेकेण्ड = 10 विपल ..... (3)

पुनः गणित से...

1 त्रुटि = सूची (सूई) द्वाराकमलपत्र भेदनकाल

60 त्रुटि = 1 रेणु

60 रेणु = 1 लव

60 लव = 1 लीक्षक

60 लीक्षक = 1 प्राण

सिद्धांतशिरोमणि ग्रन्थ की **'गुर्वक्षरैः खेन्दुमितैरसुः'** इस उक्ति से यह भी स्पष्ट होता है कि 1 असु काल 10 दीर्घाक्षर उच्चारण काल के तुल्य होता है और सिद्धांततत्त्वविवेक ग्रन्थ की **'खेन्दुगुर्वक्षरोच्चारश्वासकालो ह्यसुश्च तैः'** इस उक्ति से भी यह स्पष्ट है कि 1 असु काल 10 दीर्घाक्षर उच्चारण काल के तुल्य होता है और इसी उक्ति से यह भी स्पष्ट है की वह 1 असु 1 प्राण तुल्य काल होता है ग्रन्थान्तर एवं शब्दान्तर में असु और प्राण दो भिन्न–भिन्न नाम होते हुए भी परस्पर एक दुसरे के पर्याय हैं और दोनों की इकाई भी तुल्य ही होती हैं।

10 गुरु अक्षर उच्चारणकाल = 1 प्राण = 1 असु .....(4)

पुनः सिद्धांततत्त्वविवेक ग्रन्थ की **'पलं षड्भिः खषड्भिस्तैर्घटी तत्षष्टिसंख्यया'** इस उक्ति से यह भी स्पष्ट होता है कि

समीकरण (3) और समीकरण (4) परस्पर तुल्य होने से प्राचीन भारतीय अमूर्त्तकाल का आधुनिक काल की इकाइयों के साथ साम्य स्थापित करते हैं।

1 प्राण = 1 असु = 10 गुरु अक्षर उच्चारणकाल = 4 सेकेण्ड

1 प्राण = 60 लीक्षक = 4 सेकेण्ड

15 लीक्षक = 1 सेकेण्ड

1 लीक्षक = 1/15 सेकेण्ड

1 लव = 1/(15×60) सेकेण्ड

1 रेणु = 1/(15×60×60) सेकेण्ड

1 त्रुटि = 1/(15×60×60×60) सेकेण्ड

1 त्रुटि = 1/3240000 सेकेण्ड

अर्थात् 1 सेकेण्ड का 3240000वां भाग त्रुटि तुल्य काल कहलाता है इस गणना से यह अनुमान लगाया जा सकता है कि 1 त्रुटि का अमूर्त्तत्व अत्यन्त सूक्ष्म है।

2.5 सारांश

वेदों में जो काल का दार्शनिक स्वरूप प्रस्तुत किया गया है वास्तव में वही जगत का नियंता ब्रह्म स्वरूप है वही सृष्टि और प्रलय का कारक भी है, परन्तु कलनात्मक काल (जो काल व्यवहार गणना हेतु स्थूल और सूक्ष्म भेद से अनेक इकाईयों में विभक्त है) उस प्रलयरूपी महाकाल से भिन्न कहा गया है। भौतिक जगत में व्यवहार हेतु कलात्मक काल ही ग्राह्य है जिस में त्रुटि सबसे सूक्ष्मतम इकाई है त्रुटि से लेकर प्राण तक की सभी सूक्ष्म इकाईयां जो व्यवहार योग्य नहीं हैं वे सभी इकाईयां अमूर्त्त एवं सूक्ष्म संज्ञक होती हैं।

वेदातिरिक्त वेदांग ज्योतिष में भी काल की बृहत् चर्चा प्राप्त है, तैत्तरीय आरण्यक में भी अमूर्त्तकाल की इकाइयों का उल्लेख है, सिद्धांतज्योतिष क्षेत्र के सूर्यसिद्धान्त, सिद्धांतशिरोमणि, सिद्धांततत्त्वविवेक, सिद्धांतदर्पण, सिद्धांतशेखर, बटेश्वरसिद्धांत, सोमसिद्धांत, ब्रह्मसिद्धांत, आर्यभट्टीयम् इत्यादि और इसके साथ हारीत संहिता जैसे आयुर्वेद के ग्रंथों में भी काल की विशेष चर्चा प्राप्त होती है इसी के साथ–साथ महाभारत, श्रीमद्भागवत पुराण, विष्णु पुराण, इत्यादि ग्रंथों से भी काल विषयक संदर्भ लिए गए हैं जिसमें काल के अमूर्त रूप का विस्तृत वर्णन आया है। इस इकाई में सभी मतों का संकलन कर उनका विमर्श भी सार रूप में प्रस्तुत किया गया है।

2.6 पारिभाषिक शब्दावली

1. अणु– 'अणति सूक्षमत्वं गच्छति' अर्थात् जो सूक्षमता को प्राप्त हो, जो ग्रहण करने योग्य न हो।
2. परमाणु – 'स च नित्यः निरवयवः ततः किमपि सूक्ष्मं नास्ति', 'सः कालः परमाणुर्वै यो भूङ्क्ते परमाणूताम्' अर्थात जो काल प्रपञ्च की परमाणु जैसी सत्ता में व्याप्त रहता है वह अत्यंत सूक्षम है।
3. त्रुटि–'त्रुट्यते इति त्रुटिः' 'कालस्य सूक्ष्मतमः भेदोऽयं', अमूर्त्तकाल की सबसे सूक्षम इकाई।
4. मूर्त्त–'मूर्त्तिमान् इति' 'कस्यचिदपि विषयस्य स्थूलप्रकृतिः', अर्थात जिसे व्यक्त किया जा सके या जिसे प्रस्तुत किया जा सके या जो व्यवहार में लाया जा सके।
5. अमूर्त्त–'मूर्त्तभिन्नः',मूर्त्तरहितः 'कस्यचिदपि विषयस्य सूक्ष्मप्रकृतिः' अर्थात जो अव्यक्त हो सामान्य व्यवहार में न लाया जा सके।
6. काल–'तथा कालोदिष्टोऽप्यनेहापिसमयोऽपि' कालयति सर्वं कालः। जो सब भूतप्राणियों का संहार करता है काल, दिष्ट, अनेहस(सान्त), समय ये काल के चार पर्याय हैं।
7. प्राण–'प्राणिति जीवति बहुकालमिति' जीवनं जीवः 'जीवनस्य द्वे' प्राण से ही जीवन है।
8. असु–अस्यन्ते इति असुः 'जीवोऽसुधारणम्' अर्थात जीव और असुधारण ये दो नाम प्राण धारण करने के हैं।
9. रेणु– काल की सूक्ष्म इकाई।
10. गुर्वक्षरोच्चारणकाल–दीर्घाक्षरउच्चारण कालः' दीर्घअक्षर उच्चारण में जितना समय लगता है वह काल गुर्वक्षरोच्चारणकाल तुल्य कहा गया है दीर्घाक्षर जैसे आ, ई, ऊ, ए, ऐ, ओ, औ।
11. सिद्धान्त– ज्योतिष के तीन स्कन्धें में सिद्धान्त एक स्कन्ध है।
12. अहोरात्र–दिन और रात्रि का समाहार (योग) ही अहोरात्र कहलाता है।

2.7 बोध प्रश्न

1. अमूर्त्त काल का स्वरूप प्रतिपादित करें?
2. त्रुटि की परिभाषा लिखकर कलनात्मक काल को स्पष्ट करें?

3. विभिन्न ग्रन्थों के अनुसार त्रुटि की परिभाषा लिख कर मूर्तामूर्त्तकाल की विवेचना करें?
4. शास्त्र दृष्टि से आरोह क्रम में अमूर्त्तकाल की इकाईयों को लिखें।
5. अमूर्त्तकाल का प्रयोजन क्या है असु का आधुनिक काल के साथ साम्यत्व साधन करें।
6. वेदों में वर्णित काल की अवधारणा पर प्रकाश डालिए?

2.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

क्र.	मूल ग्रंथनाम	लेखक	प्रकाशन	ई.वर्ष
1	आर्यभट्टीयम्	साम्बशिव शास्त्री	राजकीय मुद्रण यन्त्रालय, त्रिवेन्द्रम	1931
2	ज्योतिषशास्त्रे दिग्देशकालज्ञानम्	डा. नागेन्द्र पाण्डेय	सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी	1990
3	ज्योतिष सिद्धांत संग्रहः	विन्ध्येश्वरीप्रसाद द्विवेदी	ब्रजभूषणदास एंड कम्पनी, वाराणसी	1912
4	नारदसंहिता	श्रीअभय कात्यायन	चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी	2012
5	ब्रह्मस्फुटसिद्धांतः	रामस्वरूप शर्मा	Indian institute of astronomical and Sanskrit research,Delhi	1966
6	भागवतमहापुराण		गीताप्रेस गोरखपुर, गोरखपुर उत्तरप्रदेश	2002
7	भारतीय ज्योतिष	बालकृष्ण दीक्षित	उ.प्र.संस्थान, लखनऊ	2002
8	मनुस्मृतिः	श्रीकुल्लूकभट्टव्याख्या जगदीशलाल शास्त्री	मोतीलाल बनारसी दास, वाराणसी	1983
9	विष्णुमहापुराण	अण्णङ्गराचार्य	ग्रन्थमालाकार्यालय, कांचीपुर	1972
10	संस्कृतहिन्दी शब्दकोश	वामन शिवराम आप्टे	अशोक प्रकाशन नई सड़क, दिल्ली	2006
11	सिद्धांततत्त्वविवेकः	कृष्णचंद्र द्विवेदी	सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी	1993
12	सिद्धांतदर्पणः	अरुणकुमार उपाध्याय	नाग प्रकाशक जवाहर नगर, नईदिल्ली	1996
13	सिद्धांतशिरोमणिः	सत्यदेव शर्मा	चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी	2011
14	सिद्धांतशेखरः	सत्यदेव शर्मा	चौखम्बा कृष्णदास अकादमी, वाराणसी	2015
15	सूर्यसिद्धांतः	कपिलेश्वर	टीकाकार चौखम्बा संस्कृतभवन, वाराणसी	2011